IJAER/January-February 2024/Volume-13/Issue-1 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

भीष्म साहनी के कथा साहित्य में साम्प्रदायकिता और विभाजन की त्रासदी

डॉ0 धनेश कुमार मीना

सहायक आचार्य हिन्दी

राजकीय महाविद्यालय, बिसारु झुझुनूं राजस्थान

सारांश आपको आनंद फिल्म का वो मशहूर संवाद याद है? "ये दुनिया एक रंग मंच है और हम सब इसकी कठपुतलियां।" सच ही तो है हर कोई यहां किरदार निभाने के लिए आता है और अपनी भूमिका पूरी होते ही इस रंगमंच को छोड़कर चला जाता है। हमारे बीच कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिन्हें ढेर सारे किरदार निभाने होते हैं कभी दिग्गज साहित्यकार, तो कभी अभिनेता और कभी एक समाजिक कार्यकर्ता। ऐसे ही बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे भीष्म साहनी। लोरी नहीं दंगों के शोर में बीता बचपन, 8 अगस्त 1915 को अखंड भारत के रावलपिंडी में जन्मे भीष्म साहनी का बचपन सामान्य बच्चों जैसा नहीं था। उस वक्त देश के हर हिस्से में दंगे हो रहे थे। इनके कानों ने माँ की लोरी नहीं दंगों की चीखों को सुना। इनके बचपन पर इसका बहुत बुरा असर पड़ा। भीष्म साहनी ने लाहौर के सरकारी कॉलेज से अंग्रेजी साहित्य में परास्नातक किया। इसके वे कांग्रेस पार्टी में शामिल हो गए और स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। वे 1942 में गांधी जी के नेतृत्व में शुरू हुए 'भारत छोड़ो' आंदोलन में जेल भी गए। जेल से बाहर आने के बाद उन्होंने लाहौर में ही पढ़ाना शुरू किया। इस समय लाहौर समाज सुधार आंदोलनों का केंद्र था। कहा जाता है कि यह वह समय था, जब भीष्म के मन में समाज के लिए कुछ करने की इच्छा जागृत हुई । बंटवारे के दर्द को ताउम्र नहीं भूल पाए, 1947 में देश के बंटवारे के बाद उन्हें पूरे परिवार के साथ भारत आना पड़ा। बंटवारे के कारण उन्हें बहुत कष्ट झेलना पड़ा। शायद यही वजह है कि जीवन भर भीष्म इस दर्द से उबर नहीं पाए। उनकी लगभग हर रचना में इसका प्रभाव देखने को मिलता है। भीष्म का मानना था कि कहानियों के पात्र अपनी कहानी खुद कहें तो ज्यादा बेहतर है। उन्होंने अपनी आत्मकथा 'आज के अतीत' में लिखा है कि इससे फर्क नहीं पड़ता कि कहानी के पात्र वास्तविक हैं अथवा काल्पनिक, बस वे विश्वसनीय होने चाहिए। उनकी 'अमृतसर आ गया' नाम की कहानी में उन्होंने यह बताने की कोशिश की है कि किस तरह आम आदमी एक झटके में हैवान बन जाते हैं। सांप्रदायिक उन्माद उन्हें कैसा इतना अंधा बना देता है कि वे एक–दूसरे की जान लेने पर उतारू हो जाते हैं। इसके साथ ही उन्होंने थिएटर की दुनिया में भी कदम रखा लेकिन उन्होंने खुद को एक साहित्यकार के रूप में अधिक सहज माना।

मुख्य शब्द, तमस, कुन्तो',बसंती','कड़ियां',झरोखे',मय्यादास की माड़ी और नीलू, नीलिमा नीलोफर', कहानी संग्रह–'भाग्यरेखा ,निशाचर',पाली',डायन', शोभायात्रा आदि ।

प्रस्तावना तमस ने बना दिया अमर, कहते हैं एक साहित्यकार हमारे बीच से जा सकता है लेकिन उसकी रचनाएं उसे हमेशा जीवित रखती हैं। ऐसे ही 1974 में प्रकाशित हुए उपन्यास तमस ने भीष्म को साहित्य जगत का वो तारा बना दिया जो कभी डूब नहीं सकता है। तमस को बंटवारे की पृष्ठभूमि पर लिखे गए सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों में से एक माना जाता है। आज भी लोग उसे पढ़ कर बंटवारे की विभीषिका का दर्द अनुभव करते हैं। 'तमस' के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। भीष्म साहनी ने अपने साहित्य से प्रेमचंद की परंपरा को आगे ले जाने का काम किया है। उनके लिए कहा जाता है कि उन्होंने ना सिर्फ लिखा, बल्कि अपने लिखे को जिया भी। भीष्म साहनी ताउम्र साम्राज्यवाद और समाज को विभाजित करने वाली शक्तियों के खिलाफ लड़ते रहे। जीवन भर अपने सिद्धांतों और विचारधारा से कभी नहीं

डिगे इतनी कामयाबी के बाद भी उन्हें किसी ने विरोधी की नजर से नहीं देखा। वे एक तरह से अजातशत्रु रहे। आज के ही दिन 11 जुलाई, 2003 को वो सदा के लिए इस संसार को छोड़कर चले गए। 11 जुलाई, प्रगतिशील और प्रतिबद्ध रचनाकार भीष्म साहनी का पुण्यतिथि दिवस है। इस मौके पर उन्हें याद करना, एक शानदार और पायदार परम्परा को याद करना है। वे एक अच्छे रचनाकार के अलावा कुशल संगठनकर्ता भी थे। प्रगतिशील लेखक संघ के महासचिव के तौर पर उन्होंने देश भर में इस संगठन की विचारधारा फैलाने का महती कार्य किया। भीष्म साहनी की रचनाशीलता मुख्तसर नहीं है, बल्कि इसका दायरा काफी विस्तृत है। उपन्यास, कहानियां, नाटक, आत्मकथा, लेख और कला की तमाम दीगर विधाओं में उन्होंने अपनी कलम निरंतर चलाई। उनके उपन्यास–'तमस', 'कुन्तो', 'बसंती', 'कड़ियां', 'झरोखे', 'मय्यादास की माड़ी' और 'नीलू, नीलिमा नीलोफर'। कहानी संग्रह–'भाग्यरेखा', 'निशाचर', 'पाली', 'डायन', 'शोभायात्रा', 'वांडचू', 'पटरियां', 'भटकती राख', 'पहला पाठ'। नाटक–'कबिरा खड़ा बाजार में', 'हानूश', 'माधवी', 'मुआवजे'। आत्मकथा–'आज के अतीत' को भला कौन भूल सकता है? वे प्रगतिशील लेखक संघ से एक बार जुड़े, तो इसमें आखिर तक रहे। अपने बड़े भाई अभिनेता बलराज साहनी की तरह भीष्म साहनी भी भारतीय जन नाट्य संघ यानी इप्टा के समर्पित कार्यकर्ता थे। विचारधारा और संगठन से कभी उनकी निष्ठा नहीं डिगी। साल 1975 में 'गया सम्मेलन' में वे प्रलेस के राष्ट्रीय महासचिव बने और इस पद पर साल 1986 तक रहे। भीष्म साहनी वैचारिक तौर पर एक परिपक्व रचनाकार थे। सभी मामलों में उनका नजरिया बिल्कुल स्पष्ट था। अपनी आत्मकथा 'आज के अतीत' में विचारधारा और साहित्य के रिश्ते को स्पष्ट करते हुए भीष्म साहनी लिखते हैं,''विचारधारा यदि मानव मूल्यों से जुड़ती है, तो उसमें विश्वास रखने वाला लेखक अपनी स्वतंत्रता खो नहीं बैठता। विचारधारा उसके लिए सतत प्रेरणास्रोत होती है, उसे दृष्टि देती है, उसकी संवेदना में ओजस्विता भरती है। साहित्य में विचारधारा की भूमिका गौण नहीं है, महत्वपूर्ण है। विचारधारा के वर्चस्व से इंकार का सवाल ही कहां है। विचारधारा ने मुक्तिबोध की कविता को प्रखरता दी है। ब्रेख्त के नाटकों को अपार ओजस्विता दी है। यहां विचारधारा की वैसी ही भूमिका रही है, जैसी कबीर की वाणी में, जो आज भी लाखों–लाख भारतवासियों के ओठों पर है।''

भीष्म साहनी एक कुशल संगठनकर्ता थे। प्रलेस के महासचिव के तौर पर उन्होंने देश भर में इसकी विचारधारा फैलाने का काम किया। भारतीय साहित्य में प्रगतिशील आंदोलन और प्रगतिशील लेखक संघ की भूमिका को वे महत्वपूर्ण मानते थे। प्रलेस की भूमिका पर भीष्म साहनी लिखते हैं,''प्रलेस की भूमिका एक सामाजिक, सांस्कृतिक के रूप में रही, संगठन बन जाने के बाद भी उसने संस्था का रूप नहीं लिया। उसका स्वरूप एक लहर जैसा ही है, बंधी–बंधाई संस्था का नहीं है। यह भारत की सभी भाषाओं का साझा मंच था, धर्मनिरपेक्ष जनतंत्रात्मक की दृष्टि से प्रेरित और वामपंथी विचारधारा से गहरे प्रभावित जो एक देश के स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ता था, तो दूसरी ओर विश्वव्यापी स्तर पर उठने वाले घटनाचक्र के प्रति सचेत था।'' अविभाजित भारत के शहर रावलपिंडी में 8 अगस्त, 1915 को जन्मे भीष्म साहनी ने अपनी आला तालीम लाहौर में पूरी की। पढ़ने–लिखने और रंगमंच में उनकी दिलचस्पी बचपन से ही थी। उन्होंने अपनी पहली कहानी 'अबला' उस वक्त लिख दी थी, वे जब दसवीं कक्षा में पढ़ते थे। बाद में यह कहानी उनके कॉलेज की पत्रिका 'रावी' में भी छपी। भीष्म साहनी की नौजवानी का दौर, देश की आजादी की जद्दोजहद का दौर था। साल 1942 में 'भारत छोड़ो आंदोलन' छिड़ा, तो वे भी कांग्रेस में शामिल हो गए। सियासी गतिविधियों में हिस्सा लेने लगे। इस हंगामाखेज दौर में उनकी मुलाकात सियासत और साहित्य दोनों ही क्षेत्र की अनेक महान हस्तियों महात्मा गांधी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, प्रेमचंद, सुदर्शन, दयानारायण निगम, जैनेन्द्र, बनारसीदास चतुर्वेदी, इम्तियाज अली 'ताज', रवीन्द्रनाथ टैगोर, उदय शंकर आदि से हुई, जिसका असर आगे चलकर उनकी जिंदगी पर भी पड़ा। पढ़ाई पूरी करने के बाद भीष्म साहनी ने अपने पिता के साथ कुछ दिन व्यापार भी संभाला, लेकिन उनका मन इसमें नहीं रमता था। जल्द ही वे इससे आजाद हो गए और लाहौर के एक कॉलेज में ऑनरेरी

तौर पर पढ़ाने लगे। बाकी जो वक्त मिलता, उसे पढ़ने–लिखने और नाट्य कर्म में इस्तेमाल करते। उन्हीं दिनों वे कहानियां और लेख लिखने लगे। जो उस वक्त के मशहूर पत्र–पत्रिकाओं 'विशाल भारत', 'सरस्वती' और 'हंस' में प्रकाशित हुए। बंटवारे के बाद भीष्म साहनी का पूरा परिवार भारत आ गया। देश के कई विश्वविद्यालयों में उन्होंने अध्यापन का कार्य किया। साल 1953 में उनका पहला कहानी संग्रह 'भाग्यरेखा' प्रकाशित हुआ और इसके तीन साल बाद 1956 में दूसरा, 'पहला पाठ'। भीष्म साहनी हमेशा मकसदी अदब के कायल रहे। कहानी की शैली–शिल्प और भाषा से ज्यादा उनका ध्यान इसके उद्देश्य पर रहता था। कहानी के मुताल्लिक उनका नजरिया था,''कहानी में कहानीपन हो, उसमें जिंदगी की सच्चाई झलके, वह विश्वसनीय हो, उसमें कुछ भी आरोपित न हो, और वह जीवन की वास्तविकता पर खरी उतरे।'' वहीं कहानी की भाषा के बारे में भीष्म साहनी का ख्याल था कि जहां जरूरी लगे वहां हिंदी की सहोदर भाषाओं और बोलियों का इस्तेमाल करना चाहिए।

उनके मुताबिक ''उत्तर भारत की भाषाएं एक–दूसरे से इतनी मिलती–जुलती हैं कि एक के प्रयोग से दूसरी भाषा बिगड़ती नहीं, बल्कि समृद्ध होती है।'' यही वजह है कि भीष्म साहनी की सारी कहानियां हमें जिंदगी के करीब लगती हैं। उनमें कुछ भी अपनी ओर से थोपा हुआ नहीं लगता। उनकी कहानी–उपन्यास की भाषा से भी पाठक भावनात्मक तौर पर जुड़ जाते हैं। जिसमें वे पंजाबी शब्दों, वाक्यांशों के इस्तेमाल से बचते नहीं हैं। हिंदी, उर्दू के ज्यादातर बड़े रचनाकारों ने अपने कथा साहित्य में इस परंपरा का निर्वाह किया है। फिर वे रेणु हों, चाहे राही, विजयदान देथा, यशपाल, कृष्णा सोबती, मोहन राकेश, कृष्ण बलदेव वैद। साल 1957 से लेकर साल 1963 तक भीष्म साहनी मास्को में विदेशी भाषा प्रकाशन गृह में अनुवादक के तौर पर कार्यरत रहे। इस दौरान उन्होंने करीब दो दर्जन किताबों जिसमें टॉल्सटॉय के उपन्यास भी शामिल हैं, का हिंदी में अनुवाद किया। अनुवाद को भीष्म साहनी एक कला मानते थे, अपनी आत्मकथा 'आज के अतीत' में इस विधा के बारे में उन्होंने लिखा है, ''अनुवाद कार्य भी एक कला है, पाठक को जो रस कहानी–उपन्यास को मूल भाषा में पढ़ने पर मिले, वैसा ही रस अनुवाद में भी मिले। तभी अनुवाद को सफल और सार्थक अनुवाद माना जाएगा। शाब्दिक अनुवाद–जिसे मक्खी पर मक्खी बैठाना कहा जाता है, साहित्यिक कृतियों के लिए नहीं चल सकता।'' अध्यापन और अनुवाद के अलावा भीष्म साहनी ने दो साल 'नई कहानियां' नामक पत्रिका का संपादन भी किया। उनका जुड़ाव प्रगतिशील लेखक संघ से तो था ही, 'अफ्रो–एशियाई लेखक संघ' से भी वे जुड़े रहे। इस संगठन की पत्रिका 'लोटस' के कुछ अंकों का संपादन उन्होंने किया।

'अफ्रो–एशियाई लेखक संघ' से जुड़कर भीष्म साहनी दुनिया के कई मशहूर लेखकों मसलन फिलिस्तीनी कवि महमूद दरवेश, दक्षिण अफ्रीका के एलेक्स ला गूमा, अंगोला के आगस्टीनो नेटो और फैज अहमद फैज के संपर्क में आए। अनेक अफ्रो–एशियाई देशों की यात्राएं कीं। उनको करीब से देखा–जाना। साल 1993 से 1997 तक वे साहित्य अकादमी के कार्यकारी समिति के सदस्य रहे। साहित्य, नाटक और संस्कृति के क्षेत्र में भीष्म साहनी के अविस्मरणीय योगदानों को देखते हुए उन्हें कई सम्मानों से नवाजा गया। साल 1975 में उपन्यास 'तमस' पर उन्हें 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार मिला, तो इसी साल पंजाब सरकार ने भी उन्हें 'शिरोमणि लेखक अवार्ड' से सम्मानित किया। हिंदी अकादमी, दिल्ली का शलाका सम्मान तो साहित्य अकादमी ने उन्हें अपना महत्तर सदस्य बनाकर नवाजा। भीष्म साहनी के लेखन का सम्मान अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी हुआ। साल 1980 में उन्हें 'अफ्रो–एशियन राइटर्स एसोसिएशन' का 'लोटस अवार्ड', तो साल 1983 में सोवियत सरकार ने अपने प्रतिष्ठित पुरस्कार 'सोवियत लैंड नेहरू अवार्ड' से नवाजा। यही नहीं साल 1998 में भारत सरकार ने उन्हें 'पद्म भूषण' अलंकरण से विभूषित किया।

भीष्म साहनी ने अपनी ज्यादातर कहानियां मध्य वर्ग के ऊपर लिखी हैं। मध्य वर्ग के सुख–दुःख, आशा–निराशा, पराजय–अपराजय उनकी कहानियों में खुलकर लक्षित हुई हैं। 'चीफ की दावत', 'वांड्चू', 'खून का रिश्ता', 'चाचा मंगलसेन', 'सागमीट' जैसी उनकी कई कहानियां, हिंदी कथा साहित्य में खास मुकाम हासिल कर चुकी हैं। कहानी 'चीफ की दावत' साल 1956 में साहित्य की लघु पत्रिका 'कहानी' में प्रकाशित हुई थी। इस कहानी को प्रकाशित हुए छह दशक से ज्यादा हो गए, लेकिन यह कहानी आज भी मध्य वर्ग की सोच की नुमाइंदगी करती है। इस वर्ग की सोच में आज भी कोई ज्यादा बड़ा फर्क नहीं आया है। भारत के बंटवारे पर हिंदी में जो सर्वश्रेष्ठ कहानियां लिखी गईं हैं, उनमें से ज्यादातर भीष्म साहनी की हैं। उन्होंने और उनके परिवार ने खुद बंटवारे के दुःख–दर्द झेले थे, यही वजह है कि उनकी कहानियों में बंटवारे के दृश्य प्रमाणिकता के साथ आएं हैं। कहानी 'आवाजें', 'पाली', 'निमित्त', 'मैं भी दिया जलाऊंगा, मां' और 'अमृतसर आ गया है' के अलावा उनका उपन्यास 'तमस' बंटवारे और उसके बाद के सामाजिक, राजनीतिक हालात को बड़े ही बेबाकी से बयां करता है। उपन्यास 'तमस' बंटवारे की पृष्ठभूमि, उस वक्त के साम्प्रदायिक उन्माद और इस सबके बीच पिसते आम आदमी के दर्द को बयां करता है। उनके उपन्यास 'तमस' के ऊपर जब निर्देशक गोविंद निहलानी ने 'तमस' शीर्षक से ही टेली सीरियल बनाया, तो इसे उपन्यास से भी ज्यादा ख्याति मिली। इसकी मकबूलियत का आलम यह था कि पूरे देश में लोग इस नाटक के प्रसारण का इंतजार करते। सीरियल को चाहने वाले थे, तो कुछ मुट्ठी भर कट्टरपंथी इस सीरियल के खिलाफ भी थे। उन्होंने सीरियल को लेकर देश भर में धरने–प्रदर्शन किए। यहां तक कि दूरदर्शन के दिल्ली स्थित केन्द्र पर हमला भी किया। लेकिन जितना इस सीरियल का विरोध हुआ, यह उतना ही लोकप्रिय होता चला गया। 'झरोखे' भीष्म साहनी का पहला उपन्यास था, जो उन्होंने सोवियत संघ से लौटकर लिखा था। इसके बाद उनका उपन्यास 'कड़ियां' आया। इन दोनों उपन्यासों को सम्पादक धर्मवीर भारती ने 'धर्मयुग' में धारावाहिक रूप से छापा। 'मय्यादास की माड़ी' भीष्म साहनी का एक और महत्वपूर्ण उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने बड़े ही विस्तार से यह बात बतलाई है कि किस तरह देश में ब्रिटिश उपनिवेशवाद की स्थापना हुई। देशी शासक और सेनापति यदि विश्वासघात नहीं करते, तो देश कभी गुलाम नहीं होता। भीष्म साहनी ने 'मय्यादास की माड़ी' की शुरूआत एक छोटी कहानी से की थी, जो 'एक रोमांटिक कहानी' शीर्षक से उनके कहानी संग्रह 'पहला पाठ' में प्रकाशित हुई थी।

बाद में उन्होंने इस कहानी का विस्तार किया और इस तरह से यह क्लासिक उपन्यास पाठकों के सामने आया। भीष्म साहनी का रंगमंच से भी शुरू से ही नाता रहा। इप्टा की स्थापना से ही वे अपने बड़े भाई बलराज साहनी के साथ इससे जुड़ गए थे। उन्होंने इप्टा के लिए न सिर्फ नाटक लिखे, अभिनय किया बल्कि कुछ नाटकों मसलन 'भूतगाड़ी', 'कुर्सी' का निर्देशन भी किया। कहानी और उपन्यास की तरह भीष्म साहनी के नाटक भी काफी चर्चित रहे। लेकिन उनके नाटक की शुरुआत बड़ी ठंडी रही। जब उन्होंने अपना पहला नाटक 'हानूश' लिखा, तो इसे अपने बड़े भाई बलराज साहनी और राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के निर्देशक अलकाजी को दिखाया। लेकिन दोनों ने ही इस नाटक में न तो कोई दिलचस्पी ली और न उनका उत्साह बढ़ाया। बाद में इस नाटक को निर्देशक राजिंदर नाथ ने खेला। नाटक खूब पसंद किया गया। 'हानूश' की कामयाबी के बाद भीष्म साहनी ने 'कबीरा खड़ा बाजार में' लिखा। जिसे एम. के. रैना ने निर्देशित किया। इस नाटक ने 'हानूश' की सफलता की कहानी दोहराई। एम. के. रैना के नाट्य ग्रुप ने इस नाटक को दस साल तक लगातार खेला और आज भी जब इस नाटक का प्रदर्शन होता है, तो इसे दर्शक देखने के लिए टूट पड़ते हैं। 'माधवी', 'आलमगीर', 'रंग दे बसंती चोला' और 'मुआवजे' भीष्म साहनी के दीगर चर्चित नाटक हैं। उनके सभी नाटकों में वैचारिक प्रतिबद्धता और समाज के प्रति दायित्व साफ नजर आता है। नाटक 'तमस' हो या 'हानूश' या फिर 'कबीरा खड़ा बाजार में' इन सभी नाटकों में एक बात समान है, यह नाटक धर्म और राजनीति के भयानक गठजोड़ पर प्रहार करते हैं। उनके कई नाटकों में स्त्री विमर्श

भी है। नाटक 'माधवी' और 'कबीरा खड़ा बाजार में' स्त्रीवादी नजरिए से लिखे गए हैं। नाटक के बारे में भीष्म साहनी की मान्यता थी, ''नाटक में कही बात, अधिक लोगों तक पहुंचती है। दर्शकों के भीतर गहरे उतरती है। साहित्य से आगे सामान्य जनों तक बात पहुंचती है।'' नाट्य लेखन के जरिए समाज को उन्होंने हमेशा एक संदेश दिया। भीष्म साहनी ने कुछ सीरियलों और फिल्मों में अभिनय भी किया। मसलन 'तमस', 'मोहन जोशी हाजिर हो' और 'मिस्टर एंड मिसेज अय्यर'।

निष्कर्ष प्रेमचंद की तरह भीष्म साहनी का भी यह मानना था कि लेखक राजनीति के आगे चलने वाली मशाल है और अपनी इस बात को वे एक इंटरव्यू में इस तरह से सही ठहराते हैं,''लेखक का संवेदन अपने समय के यथार्थ को महसूस करना और आंकना है। अंतर्द्वंद्व और अन्तर्विरोध के प्रति सचेत होना है। इसी दृष्टि से उसकी पकड़ समाज के भीतर चलने वाले संघर्ष पर ज्यादा मजबूत होती है। और परिवर्तन की दिशा का भी भास होने लगता है। इसी के बल पर वह राजनीति से आगे होता है और पीछे नहीं।'' भीष्म साहनी को एक लंबी उम्र मिली और उन्होंने अपनी इस उम्र का सार्थक इस्तेमाल किया। जिंदगी के आखिरी लम्हों तक वे सक्रिय रहे। बीमारी, शारीरिक दुर्बलता के बावजूद उन्होंने अपना लिखना–पढ़ना और सांगठनिक जिम्मेदारियां नहीं छोड़ी। वे सचमुच एक कर्मयोगी थे। 11 जुलाई, 2003 को भीष्म साहनी हमसे हमेशा के लिए जुदा हो गए। उनके निधन के बाद कहानीकार कमलेश्वर ने उन्हें अपनी श्रद्धांजलि देते हुए जो श्रद्धांजलि लेख लिखा, वह आज भी हिंदी साहित्य में उनके अवदान और उनकी लोकप्रियता को जानने का पैमाना हो सकता है,''भीष्म साहनी को याद करने का मतलब है, उनके पूरे समय को याद करना। बीसवीं सदी पर उनका नाम इतनी गहराई से अंकित है कि उसे मिटाया नहीं जा सकता। आजादी के साथ और इक्कीसवीं सदी की 11 जुलाई, 2003 तक यह नाम हिंदी कथा साहित्य और नाटक लेखन का पर्याय रहा है। ऐसी अनोखी लोकप्रियता भीष्म साहनी ने प्राप्त की थी कि प्रत्येक तरह का पाठक उनकी रचना की प्रतीक्षा करता था। उनका एक–एक शब्द पढ़ा जाता था। किसी सामान्य पाठक से भी यह पूछने की जरूरत नहीं पढ़ती थी कि उसने भीष्म की यह या वह रचना पढ़ी है या नहीं। उनकी कहानी या उपन्यास पर एकाएक बात शुरू की जा सकती थी। ऐसा विरल पाठकीय सौभाग्य या तो प्रेमचंद को प्राप्त हुआ था या हरिशंकर परसाई के बाद भीष्म साहनी को प्राप्त हुआ और यह भी विरल घटना है कि भीष्म को जो यश हिंदी से मिला वह उनके जीवित रहते हिंदी का यश बन गया। ऐसा दुर्लभ सौभाग्य भी किस रचनाकार को प्राप्त होता है ? भीष्म जैसे कालजयी रचनाकार को कोई कैसे भुला सकता है ?

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 पद्म पुरस्कार (पीडीएफ) गृह मंत्रालय, भारत सरकार। 2015. 15 अक्टूबर 2015 को मूल (पीडीएफ) से संग्रहीत। 21 जुलाई 2015 को लिया गया। पृ0 44

2 पॉल, शाइनो बेबी (11 जुलाई 2020) यह भीष्म भारतीय साहित्य के पितामह ने समाज की अज्ञानता को दर्पण बनाया 19 जुलाई 2020 को लिया गया. पृ0 77

3 तमस संग्रहीत 22 अक्टूबर 2006 को वेबैक मशीन पर पृ0 23

4 शौक द्य रहस्य कक्ष' 2 अगस्त 2014 को मूल से संग्रहीत 9 अगस्त 2014 को लिया गय पृ0 123 5 कुमार, कुलदीप (7 अगस्त 2015) अंधेरे से परे चमक हिन्दू 19 जुलाई 2020 को लिया गया पृ0 78

6 यूएस लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस में भीष्म साहनी Loc-gov (8 अगस्त 1915) 2018–11–06 को पृ0 96

7 कबीरा खड़ा बाजार में' 23 साल बाद पुनर्जीवित'' आउटलुक इंडिया 2 दिसंबर 2015 पृ0 48

8 मीता कपूर. राशी बन्नी द्वारा माधवी सोलोः हर महिला की कहानी' हिंदुस्तान टाइम्स. 10 मई 2010 पृ0 89

9 नाटक समीक्षक.ब्रिटिश काउंसिल में राशि बनी द्वारा भीष्म साहनी की माधवी' आनंद फाउंडेशन. 11 मई 2008 को मूल से संग्रहीत 23 दिसंबर 2008 को पुनःप्राप्त। पृ0 54